सतबहनों की बोली

राघवेन्द्र गदगकर
चित्रः भार्गव कुलकर्णी
अनुवादः शशि सबलोक

शोर मचाती सात बहनें अकसर कहीं भी मिल जाती हैं। जंगलों, बगीचों, घरों के आसपास कहीं भी। ये अकेले कम दिखती हैं। अकसर छह-दस-दस साथ रहती हैं। रहती हैं या रहते हैं यह पता नहीं चलता। इसलिए कहीं इन्हें सात बहनें कहते हैं, कहीं सात भाई। भारत में कम ही जगहें होंगी जहाँ ये नहीं मिलती हैं। और जहाँ मिलती हैं वहाँ शोर मचा-मचाकर अपने होने की खबर देती रहती हैं। इतनी करीब हैं हमसे पर ताज्जुब कि इनके बारे में हमें बहुत-सी बातें एक अँग्रेज एंटोनी गैस्टन से पता चलीं। सात बहनें (जंगल बैबलर) को जानने 1970 के दशक में वे ऑक्सफोर्ड से भारत आए थे। उनके बाद इस पर आगे काम नहीं हुआ।

पिछले दिनों आयसर मोहाली की मंजरी जैन और उनकी दो शोधकर्ताओं सोनिया देवी ऐमबेन और सोनम चोरोल ने बैबलर पर ज़बरदस्त काम किया है। जानवरों की बोली (आवाज़) में मंजरी की दिलचस्पी है। तो ये शोरीली चिड़िया कैसे इनका ध्यान अपनी ओर न खींचती! उन्होंने सोचा कि इनकी तीखी चींचीं जो हमें सुनाई देती है वो उत्ती ही है या कुछ और भी कह रही है।

जवाब पाने मंजरी अपने साथियों के साथ काम में भिड़ गईं। उन्होंने मोहाली में नौ जगहें तय कीं। वहाँ कई दिनों तक सात बहनों के बहुत-से झुण्डों की हर हरकत पर नज़र रखी। घूमती चिचियाती चिड़ियों की आवाज़ों को रिकॉर्ड किया। घोंसले में बैठी और जाल में फँसी चिड़ियों और उनके बच्चों की चींचीं भी रिकॉर्ड की। इनकी टाँगों पर रंगीन छल्ले पहनाए ताकि हरेक की पहचान की जा सके।

वो क्या कह-सुन रही थीं?

चिचिया कर बैबलर जो कह रही है उसे सामनेवाली चिड़िया समझ क्या रही है? इसे जानने के लिए काफी मशक्कत की गई। रिकॉर्ड की गई सारी आवाज़ों को बार-बार सुना गया। अलग-अलग आवाज़ों को पहचाना गया। उनको नाम दिया गया। आवाज़ जैसी सुनाई दी, वही नाम दिया गया। ध्वनियों के मुताबिक नाम दिए जाने को ओनोमैटोपोइक कहते हैं।

एंटोनी गैस्टन ने भी सात बहनों की आवाज़ों की सूची बनाई थी। मंजरी ने इसे आगे बढ़ाते हुए इसमें कई और नाम जोड़े। जैसे, चक, कुक, क्या-क्या-

क्या, क-क-क, खैक...। हर आवाज़ के साथ वे यह भी नोट करती रहीं कि किस स्थिति में इसे बोला गया और उसे सुनकर सामनेवाले की क्या प्रतिक्रिया रही। इस तरह पन्द्रह अलग-अलग चिचियाहटों को दर्ज किया गया। इन पन्द्रह ध्वनियों में से सात दोस्ताना और आठ गैरदोस्ताना स्थितियों में बोली गईं। मंजरी और उनकी टीम ने जो पाया उसे दो उदाहरणों से समझते हैं - सम्पर्क करने और परेशानी में की गई ध्वनियाँ।

अपने साथियों से सम्पर्क करने के लिए 'चक' की आवाज़ की गई। खासतौर पर जब कोई अपने साथियों से बिछड़ गया था। इस आवाज़ को सुनकर

कई साथी (50 प्रतिशत) वही आवाज़ करने लगे। इनमें से 41 प्रतिशत पीछे रह गए साथी को लिवाने उसके पास लौट आए। चक की आवाज़ ऊँची एकस्वरीय आवाज़ होती है।

परेशानी में की गई आवाज़ 'क्या-क्या-क्या' तीखी एकस्वरीय पुकार होती है। परेशानी में फँसी चिड़िया इसे लगातार बोलती रहती है। आमतौर पर जाल में फँसने या इंसान द्वारा पकड़े जाने पर यह आवाज़ की जाती है। शायद साथियों का ध्यान अपनी ओर लाने के लिए। टीम ने करीबन 30 प्रतिशत साथियों को इस पर प्रतिक्रिया देते देखा।

किस्म-किस्म की बोलियाँ

जंगल बैबलर की ये पन्द्रह तरह की बोलियाँ हमें एक-दूसरे से एकदम अलग सुनाई देती हैं। साथी चिड़ियाँ इनसे अलग-अलग अर्थ पाती दिखीं। पर विज्ञान में शोध किन्हीं लोगों के अनुभव के आधार पर नहीं हो सकता। किसी भी नतीजे पर पहुँचने के लिए आवाज़ों को ठोस अंकों में तब्दील करना ज़रूरी है। आवाज़ हवा के कम्पन से पैदा होती है। इसलिए सभी पन्द्रह आवाज़ों का स्पेक्ट्रोग्राम द्वारा मापन किया गया। स्वरों के बीच की दूरी के हिसाब से आवाज़ों को एकस्वरीय, बहुस्वरीय (एक बार में एक से ज़्यादा स्वर) या कोरस (एक से ज़्यादा पक्षियों का एक साथ आवाज़ें करना) कहा गया।

जंगल बैबलर के बहुस्वरीय आवाज़ के स्पैक्ट्रोग्राम थे-

1. खतरा हो सकता है
2. खतरा है, सावधान
3. तैयार रहो
4. तुरन्त उड़ जाओ

पहली दो आवाज़ें तब की गईं जब कोई चुनौती दी जा रही हो। जबकि दूसरी दो आवाज़ें बचाव के लिए की जाती पाई गईं। स्पैक्टोग्राम से कई तरह के आकड़े निकाले गए। जैसे किस तरह की आवाज़ करते हुए कहाँ-कहाँ कितनी ऊर्जा लगी, आवाज़ों की लम्बाई कितनी थी, आवाज़ें कितनी स्वरीय थीं वगैरह वगैरह।

पाया गया कि दोस्ताना आवाज़ों की संरचना लगभग एक-सी थी। और गैरदोस्ताना आवाज़ों की संरचना मिलती-जुलती थी। यानी मिलते-जुलते अर्थ वाली आवाज़ों की संरचना में समानता देखी गई।

मंजरी की टीम ने अपने नतीजे एक लेख में लिखे - बेकार की बड़बड़ से कहीं ज़्यादा कहती है बैबलर। टीम का कहना सही भी है।

अपने आसपास इस आसानी से मिलने वाली चिड़िया पर शोध कर रही इस टीम ने बैबलर के चिचियाने में किसी इंसानी भाषा की-सी बारीकियाँ खोज निकाली हैं। मैं चाहूँगा कि कोई और आए जो इन नतीजों की नींव पर अपने अलग अध्ययन की इमारत खड़ी करे। और यह बिलकुल ज़रूरी नहीं कि जीवों के व्यवहार को जानने के लिए कोई दुर्लभ, पहुँच के बाहर के या इकोलॉजिली नाज़ुक जीव का ही चुनाव किया जाए। बल्कि बात तो तब है जब आम से, आसानी से दिखाई दे जाने वाले जीवों पर कोई खास शोध हो।

(यह लेख का सम्पादित रूप है। पूरा लेख द वायर में पढ़ा जा सकता है - डीकोडिंग द बैबल्स ऑफ बैबलर्स, क्रिकेट्स एण्ड अण्डरग्रेड्स)